

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18, अंक-1, दिसम्बर 2024 जनवरी फरवरी 2025





RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18

अंक - 1

दिसम्बर-2024, जनवरी-फरवरी-2025

सम्पादक

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक

कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* प्रो. जे. पी. शर्मा - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

- * प्रो. विभा उपाध्याय - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
- * नर्मदा प्रसाद उपाध्याय - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
- * प्रो. टी.के. माथुर - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
- * डॉ. रमेश अग्रवाल - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
- * डॉ. गौरव बिस्सा - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
- * डॉ. बीना शर्मा - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
- * प्रो. शोभा आर. मिश्रा - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
- * डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक

डॉ. रीता पारीक

प्राचार्य

हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक

डॉ. मृत्युंजय शर्मा

सह-आचार्य

हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक

डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन

मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव

व्यवस्थापकीय कार्यालय

सृजन संस्थान,

आचमन, वेद विहार,

लोहाखान, अजमेर-06

दूरभाष : 0145-2426610

e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :

पुष्पा शर्मा

सृजन संस्थान,

द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,

अजमेर

☆ मुद्रक :

मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,

केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :

श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स

132, पंचवटी कॉलोनी,

अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक)

संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)

कृपया चेक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर
की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

भारतीय सूफी परम्परा में संगीत साधना

श्वेता त्रिवेदी

सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)

हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

कला :

‘कला’ शब्द भारतीय चिन्तन में अत्यंत व्यापक अर्थों में प्रयुक्त होता है। यह मात्र किसी तकनीक, कौशल या मनोरंजन तक सीमित नहीं है, बल्कि मनुष्य की सम्पूर्ण सौन्दर्यमयी चेतना का विस्तार है। कला का मूल उद्देश्य ‘अनुरंजन’ अर्थात् मनुष्य के हृदय में सौन्दर्यबोध उत्पन्न करना, अनुभूतियों को संवेदनशील बनाना और भावों को उदात्त करना—माना गया है।

मनुष्य के भीतर अनेक सूक्ष्म भाव, अनुभूतियाँ और अनुभाव रहते हैं जिन्हें शब्दों में व्यक्त करना सरल नहीं होता। जब ये सूक्ष्म भाव किसी माध्यम से स्वरूप ग्रहण करते हैं, तब कला का जन्म होता है। यही कारण है कि विभिन्न कलाएँ— ‘शब्द’ के माध्यम से काव्य और साहित्य, ‘छेनी-हथौड़ी’ के माध्यम से मूर्ति, ‘तूलिका और रंगों’ के माध्यम से चित्रकला, ‘अंग-संचालन’ के माध्यम से नृत्य, और स्वरों के आरोह-अवरोह के माध्यम से संगीत।

इन सभी का आधार मनुष्य की अन्तःप्रेरणाएँ ही होती हैं। प्रत्येक कला मन के भीतर उमड़ते भावों को किसी विशिष्ट रूप में ढालती है ताकि वे दूसरों तक पहुँच सकें और स्वयं सृष्टिकर्ता के लिए भी स्पष्ट हो सकें।

कला का यही रूप—धुँधली अनुभूतियों को आकार देने की प्रक्रिया—उसे सामान्य कौशल से अलग करता है। कला का लक्ष्य केवल वस्तु बनाना नहीं, बल्कि **भावों को बुद्धगम्य और दृष्टिगोचर** बनाना है। सौन्दर्य, सामंजस्य, लय, रचना और संवेदना—ये सभी कला की आत्मा हैं।

भारतीय परम्परा में कला को साधना का रूप भी माना गया है, क्योंकि इसके माध्यम से मनुष्य अपने भीतर स्थित सूक्ष्म चेतना का विस्तार करता है। इसी भावभूमि पर आगे चलकर भारतीय सूफी परम्परा में संगीत साधना का विकास हुआ, जहाँ संगीत को मनुष्यता, प्रेम और ईश्वर-साक्षात्कार की राह माना गया।

संगीत-कला :

सूफीमत में ‘संगीत’ और विशेष रूप से ‘समा’ (आध्यात्मिक संगीत-साधना) को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। समा को जिक्र—अर्थात् ईश्वर-स्मरण—का सबसे अधिक प्रचलित, प्रभावी और अनुभव-आधारित रूप माना गया है। सूफी इतिहास बताता है कि जिक्र की जितनी विधाएँ प्रचलित थीं, उनमें *समा* पर ही सबसे अधिक वाद-विवाद हुआ। तसव्वुफ के विविध संप्रदायों में कुछ इसे आध्यात्मिक उन्नयन का

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

अत्यंत सशक्त साधन मानते थे, जबकि अन्य इसे धार्मिक मर्यादा के विरुद्ध समझकर कठोरता से विरोध करते थे।

विवाद का एक कारण यह भी रहा कि इस्लाम की परम्परागत धारा में कविगान और संगीतज्ञों की आलोचना की गयी, जिससे यह मत प्रबल हुआ कि अन्तिम रसूल को संगीत प्रिय नहीं था। नृत्य को तो इस्लाम के रूढ़िवादी विद्वान कभी-कभी बुतपरस्ती से जुड़ा कर्म मानते थे; ऐसे में संगीत या समा को धार्मिक साधना का अंग मानना उनके लिए स्वीकार्य नहीं था।

फिर भी प्रश्न उठता है—क्या समा की किसी प्रकार की संभावना इस्लाम में सर्वथा अनुपस्थित थी? इसका उत्तर है—नहीं। इस्लामी परम्परा के भीतर कई संकेत ऐसे मिलते हैं जो संगीत-संवेदना की उपस्थिति को प्रमाणित करते हैं। 'वही' की स्थिति में स्वयं पैगम्बर मुहम्मद को 'घंटी के नाद' जैसा सूक्ष्म, मधुर कंपन सुनाई पड़ता था। कुरान की 'सुगम, सुमधुर तिलावत' से वे अत्यंत प्रभावित होते थे—यह दर्शाता है कि ध्वनि-सौंदर्य के प्रति उनकी संवेदनशीलता गहन थी।

आज भी हज यात्रा के समय तीर्थयात्री मक्का के पवित्र स्थल में भाव-विभोर होकर लयात्मक गति से दौड़ते, घूमते और तल्लीनता में डूबे दिखाई देते हैं। काबा की परिक्रमा (तवाफ़) भी प्राचीन धार्मिक उत्साह का वह प्रतीक है जो सामूहिक उमंग, भावावेश और शरीर-गत नृत्यात्मकता से जुड़ा हुआ था। यह वही सांस्कृतिक परम्परा है जिसमें किसी उत्सव के समय नाच-गान तथा दिव्य प्रतीकों के स्पर्श को ईश-कृपा का लक्षण माना जाता था।

इसी सांस्कृतिक प्रवाह और आध्यात्मिक अनुभूति की पृष्ठभूमि में समा की सत्ता इस्लाम में कभी पूरी तरह समाप्त नहीं हुई। युग-युग में उसके स्वरूप बदले, स्वर लय में छिप गए, किन्तु उसका अस्तित्व जीवित रहा। और फिर, जब सूफ़ीमत आत्मानुभूति और प्रेम-मार्ग की ओर उन्मुख हुआ, तब यही समा पुनः विकसित होकर सूफ़ी साधना का प्रमुख माध्यम बन गया—जहाँ संगीत, स्वर, लय और नृत्य ईश्वर-प्रेम की अनुभूति को जाग्रत करने के साधन बनते हैं।

भारतीय सूफ़ी परम्परा में 'इश्क' (आध्यात्मिक प्रेम) और 'समा' (संगीत साधना) का आपसी सम्बन्ध अत्यंत गहन और दर्शनात्मक है। सूफ़ी कवियों ने संगीत और प्रेम को केवल भावनाओं या मनोरंजन का साधन नहीं माना, बल्कि इसे आध्यात्मिक अनुभूति और आत्म-साक्षात्कार का माध्यम माना। नूर मोहम्मद जैसे कवियों ने अपने काव्य में इसे विशेष रूप से रेखांकित किया। उनके ग्रंथ 'इन्द्रावती' और 'अनुराग बाँसुरी' में राग-रंग और संगीत को आध्यात्मिक साधना के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया। नायिका सर्वमंगला को केवल कथा की पात्र नहीं बल्कि अनन्त सौन्दर्य और संगीत का प्रतीक माना गया है। रागिनी और स्वर का महत्व इस संदर्भ में अत्यंत गहन है, क्योंकि वही साध्य है जिसे प्राप्त करने के लिए कवि की कथा और ध्यान केंद्रित है। अर्थात्, सभी अन्तःकरणों के लिए अनन्त प्रेम (इश्क) और अनन्त संगीत (समा) की तन्मयता आवश्यक है। यही वह दार्शनिक आधार है जिस पर सूफ़ी कवियों ने संगीत और प्रेम के प्रसंग को अपने काव्य में विस्तृत किया।

भारत में संगीत की परंपरा अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रही है। प्राचीन ग्रंथों में संगीत के विवेचन और राग-रागिनियों का उल्लेख मिलता है। हिन्दी सूफ़ी काव्य के आविर्भाव के समय भारत में संगीत का विशेष

प्रचार था और हिन्दू तथा मुसलमान शासकों के दरबारों में संगीतज्ञों का आदर होता था। अमीर खुसरो, अलाउद्दीन खिलजी के दरबार में, भारतीय पारंपरिक संगीत को फ़ारसी प्रवाह के साथ जोड़कर अनेक नवीन राग और गीतों का निर्माण किया। सम्राट अकबर के दरबार में तानसेन, बैजू बावरा और गोपाल जैसे संगीतज्ञों ने संगीत के क्षेत्र में नवीन रागों का आविष्कार किया। तानसेन द्वारा रचित मियाँ की मल्हार और मियाँ की टोड़ी जैसे राग भारतीय संगीत परंपरा में अद्वितीय योगदान हैं। ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर ने भी चार प्रकार के गूजरी रागों—गूजरी, बहुल गूजरी, मालगूजरी और मंगलगूजरी—का प्रचार किया। इसके अतिरिक्त बंगाल के चंडीदास और कृष्ण चैतन्य तथा हिन्दी के कवि सूरदास और स्वामी हरिदास ने संगीत परंपरा को जीवित और विकसित रखा।

संगीत केवल गायन तक सीमित नहीं है। इसकी परिभाषा में गायन, वादन और नृत्य तीनों शामिल हैं। ये तीनों अंग परस्परालंबी हैं और सूफ़ी काव्य में इन्हें अत्यंत सजीव रूप में प्रस्तुत किया गया है। संगीत वाद्य का, वादन और नृत्य का घनिष्ठ संबंध सूफ़ी कवियों ने अपने प्रेमाख्यानों और आध्यात्मिक रचनाओं में दर्शाया। इस प्रकार, संगीत का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि भावनाओं, प्रेम और आध्यात्मिक अनुभूति का संचार है। यही कारण है कि हिन्दी सूफ़ी कवियों ने संगीत, राग और रागिनियों का अपने काव्य में बार-बार उल्लेख किया। संगीत और इश्क के माध्यम से वे मन और आत्मा के गहन अनुभव को पाठक और श्रोता तक पहुँचाने का प्रयास करते हैं।

सूफ़ी परम्परा में संगीत साधना, यानी समा, न केवल ध्वनि का आनन्द है, बल्कि यह आध्यात्मिक उन्नयन, प्रेम और तन्मयता का साधन भी है। संगीत के माध्यम से सूफ़ी कवि और साधक अपने अन्तःकरण को ईश्वर-प्रेम में लीन करते हैं और श्रोता के हृदय में वही भाव जाग्रत करते हैं। इस दृष्टि से देखा जाए तो सूफ़ी कवियों में इश्क और समा का सम्बन्ध अत्यंत गहरा और अविभाज्य है, जो उनकी काव्य-रचनाओं की आत्मा और सार है।

गायन और राग-रागिनी :

संगीत में ‘नाद’ का अत्यधिक महत्व है। नाद से ही संगीत की आधारशिला बनती है और इसे स्वर, ग्राम, मूर्छना तथा राग के संयोजन से व्यवस्थित किया जाता है। भारतीय संगीत में सात मुख्य स्वर माने गए हैं: (1) षड्ज (सा), (2) ऋषभ (रे), (3) गान्धार (ग), (4) मध्यम (म), (5) पंचम (प), (6) धैवत (ध), (7) निषाद (नि)।

इन स्वरों के प्रथमाक्षरों से ‘सा रे ग म प ध नि’ का संकेत बनता है। इन स्वरों के समूह को ‘ग्राम’ कहते हैं। ग्राम तीन प्रकार के माने गए हैं: (1) षड्ज ग्राम, (2) मध्यम ग्राम, (3) गान्धार ग्राम।

सातों स्वरों के क्रमिक आरोह-अवरोह को ‘मूर्छना’ कहते हैं, और प्रत्येक ग्राम में सात मूर्छना होती हैं। इस प्रकार स्वरों और मूर्छनाओं की संख्या कुल इक्कीस होती है।

‘राग’ वह स्वरसमूह है जिसमें आरोह-अवरोह के साथ संयोजन किया जाता है और जिसका उद्देश्य ‘चित्त का अनुरंजन’ करना होता है। मतंग मुनि ने अपनी रचना ‘वृहद्देशी’ में राग की परिभाषा इस प्रकार दी है:

‘स्वर-वर्ण विशेषण ध्वनि भेदेन वा पुनः,

राज्यते येन यः कश्चित् स रागः सम्मतः सताम्।

अथवा: योऽसौ ध्वनि विशेषस्तु स्वर-वर्णाभिभूषितः,

रंजको जन चित्तानां स राग उदाहृतः।’

अर्थात् राग वह है जो विशेष स्वर-वर्णों और ध्वनि भेदों से निर्मित होता है और जो लोगों के हृदय को रमणीयता प्रदान करता है।

राग-रागिनियाँ प्रायः तीन प्रकार की मानी जाती हैं: (1) औडुव, (2) षोडव, (3) संपूर्ण। हालाँकि राग-रागिनियों की संख्या बहुत अधिक है, पर प्रमुख रूप से छः राग और छत्तीस रागिनियाँ प्रचलित मानी गई हैं। नारद मुनि के अनुसार ये राग और रागिनियाँ स्वयं ब्रह्म से उत्पन्न हुई हैं और उनके सम्मान में गाई जाती हैं:

‘रागाः षडय रागिण्यः षट्-त्रिंशत् चारु-विग्रहाः,

आगता ब्रह्म-सदसि ब्रह्माणम् समुपासते।’

इस प्रकार गायन में स्वरों, मूर्छनाओं और राग-रागिनियों का संयोजन केवल तकनीकी अभ्यास नहीं, बल्कि भाव और सौन्दर्य के माध्यम से मन और आत्मा को अनुभूत करने का एक गहन साधन है। यही वह आधार है जिस पर सूफ़ी संगीत और समा की साधना विकसित हुई, जहाँ राग और रागिनियाँ इश्क और आध्यात्मिक तन्मयता के प्रतीक बनती हैं।

भारतीय संगीत शास्त्र में राग और रागिनियों का विश्लेषण अत्यंत सूक्ष्म और व्यवस्थित रूप में किया गया है। संगीत शास्त्र के आचार्यों ने विभिन्न ग्रंथों में छः प्रमुख रागों और उनसे संबंधित छत्तीस रागिनियों की अलग-अलग सूची प्रस्तुत की है। यह संख्या केवल संख्यात्मक परिभाषा नहीं, बल्कि संगीत संरचना और भावात्मक प्रस्तुति का प्रतीक है। मतंग मुनि ने अपने ग्रंथों में छः प्रधान रागों के रूप में कर्नाट, नाट, मेवमलार, देसाख, मालव और वसंत को माना। प्रत्येक राग से संबंधित छः-छः रागिनियाँ मिलाकर कुल छत्तीस रागिनियों का निर्माण होता है। इसके विपरीत, नारद मुनि ने छः प्रधान रागों के रूप में मालव, मलार, श्री, वसंत, हिंडोल और कर्नाट को प्रस्तुत किया। भारतखंडे ने श्री, पंचम, भैरव, मेघ, नटनारायण और बसंत को प्रमुख राग माना। विभिन्न शास्त्रकारों की सूचियों में प्रमुख रूप से भैरव, श्री, मालकोप, दीपक, मेघ और हिंडोल रागों का उल्लेख देखा गया है।

हिन्दी सूफ़ी काव्य में भी छः राग और छत्तीस रागिनियों का उल्लेख नियमित रूप से मिलता है। कविताओं और काव्यग्रंथों जैसे मृगावती, पदमावती, चित्रावली, हंसजवाहिर, इन्द्रवती में राग-रागिनी की यह परंपरागत संख्या रूढ़ है। प्रारंभ में केवल छः राग और उनकी छत्तीस रागिनियाँ मानी गई थीं, लेकिन समय के साथ कवियों ने रागों की स्त्रियाँ, उनके पुत्र और पुत्र-वधुओं को परिगणित कर इनकी संख्या बढ़ा दी। यह विस्तार रागों की विस्तृत भावात्मक और संरचनात्मक विविधता को दर्शाता है।

‘मृगावती’ काव्य में छः संपूर्ण राग और उनकी तीस भार्याओं का उल्लेख मिलता है। प्रत्येक राग के साथ पाँच-पाँच भार्याएँ जुड़ी हुई हैं। भैरव राग के साथ मधुमाधी, सिंधवी, बंगाला, बैराटिक और गुनकरी

जुड़ी हुई हैं। मालकोष राग में गौड़ी, टोड़ी, गुनकह (कुंकुभ), खंभावती और अन्य भार्याएँ सम्मिलित हैं। हिंदोल राग में वैरारी, विचित्र, देसाख, नाटिक और नाट शामिल हैं। दीपक राग के साथ वर सीचंद ?, कामोदिक, देसी, पटमंजरी और गवाई जुड़ी हुई हैं। मेघ राग में मालश्री, सारंग, बैरारी, धनाश्री और गंधारी भार्याएँ गिनी गई हैं। श्रीराग के अंतर्गत हेमकरी, मलार, गूजरी और भीमपलासी का उल्लेख मिलता है। इस विस्तृत वर्गीकरण से स्पष्ट होता है कि राग और रागिनियाँ केवल स्वर और मूर्छना तक सीमित नहीं हैं, बल्कि प्रत्येक राग में विभिन्न भार्याएँ और उपराग सम्मिलित हैं, जो संगीत की भावात्मक, तार्मिक और रंगीन प्रस्तुति को समृद्ध बनाते हैं।

छः प्रमुख राग और उनकी छत्तीस रागिनियाँ केवल संगीत का तकनीकी ढांचा नहीं हैं, बल्कि यह भाव, सौन्दर्य और आध्यात्मिक अनुभूति का प्रतीक हैं। सूफ़ी कवियों ने इन्हें अपने काव्य और संगीत में न केवल रचना-सौंदर्य के लिए बल्कि इश्क और समा के माध्यम से आध्यात्मिक तन्मयता और प्रेम-भाव को व्यक्त करने के लिए प्रयोग किया। इस प्रकार राग-रागिनी की यह प्रणाली सूफ़ी संगीत और काव्य में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

मलिक मुहम्मद जायसी ने अपनी महाकृति 'पद्मावती' में छः प्रमुख राग—भैरव, मालकोष, हिंदोल, मेघमल्हार, श्री और दीपक—का उल्लेख किया है। उन्होंने प्रत्येक राग के साथ छत्तीस रागिनियों का सिद्धांतात्मक रूप से उल्लेख किया, परंतु उनके व्यक्तिगत नामों का परिगणन नहीं कराया। जायसी का उद्देश्य रागों और रागिनियों की संख्या और उनका संरचनात्मक महत्व दर्शाना था, जिससे संगीत और काव्य का आध्यात्मिक और भावात्मक संबंध स्पष्ट हो सके।

उसमान ने 'चित्रावली' में संगीत का निरूपण अन्य कवियों की अपेक्षा और अधिक गहराई के साथ प्रस्तुत किया है। उन्होंने केवल रागों का नामोल्लेख नहीं किया, बल्कि ग्राम, स्वरों के शास्त्रीय नाम और उनकी संख्या का भी विवेचन किया। उनके अनुसार तीन ग्रामों—ऊँडौ, खाडी और सरल—में कुल सात स्वर—षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद—संगीत की आधारशिला हैं। कवि ने अपने शास्त्रीय ज्ञान के आधार पर स्वरों की संख्या और क्रम को स्पष्ट करते हुए लिखा:

‘तीनि ग्राम गाइनि सुर बरना। ऊँडौ खाडी सरल संपुरना।

खरज, रिखब, गंधार सोहावा। चौथे सुर मध्यम पुनि गावा।

पंचम धैवत और निषाधा। सोइ गुनी सार्तो सुर साधा।’

उसमान ने संगीत के संदर्भ में गंधर्वों का भी उल्लेख किया है। गंधर्व स्वर्ग के देवताओं के गायक माने जाते हैं, और उनके दो प्रमुख नाम हाहा और हुहू हैं। कवि ने लिखा है:

‘हाहा हूहूश्चित्ररथो हंसो विश्वावसुस्तया।

गोमायुस्तुम्बुरुर्नन्दिरेवमाद्याश्च ते स्मृताः।’

इस संदर्भ में उसमान ने हिन्दू संगीत परंपरा का ज्ञान प्रकट करते हुए लिखा कि गंधर्वों और रागों का प्रदर्शन मनुष्य और देवताओं के हृदय को समान रूप से आनंदित करता है। उन्होंने छः रागों की दो सूचियाँ प्रस्तुत कीं। हनुमंत मत के अनुसार भैरव, कौसिक, मेघमल्हार, हिंदोल, दीपक और श्री प्रमुख राग हैं। पार्वती

मत में श्री, भैरव, बसंत, पंचम, मेघमलार और नटनारायण को प्रधान राग माना गया। रागिनियों की संख्या और नामों का विवरण भी कवि ने प्रस्तुत किया। उदाहरण स्वरूप, श्री राग की रागिनियाँ गौरी, मधुमाधवी, केदारी, दखिन, मालवी और बिहारी हैं। भैरव राग की रागिनियाँ रख, बंगाली, गूजरी, देसी, देवगिरी और बैराटी हैं। बसंत राग की रागिनियाँ टोड़ी और हिंडोल हैं। पंचम राग की रागिनियाँ विभास, भूपाली, बड़हीसी, करनाटी और माली हैं। मेघ राग की रागिनियाँ गंधारी, सोरठ, मल्लारी सादेरी और हरसिंगारी हैं। कौसिकी राग की रागिनियाँ नटिका, कामोदी, कल्याणी, नट हम्मीर, अहीरी और सारंगी हैं।

नूर मोहम्मद ने ‘इन्द्रवती’ में छः राग—भैरो, मालकोष, हिंडोल, दीपक, श्री और मलार—का उल्लेख किया। उन्होंने राग—रागिनियों की संख्या भी निर्धारित की, जो क्रमशः छः और छत्तीस हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने प्रत्येक राग के साथ पुत्र और पुत्रवधुओं का भी विवरण दिया, जो संगीत की गहन संरचना और संवेदनाओं को दर्शाता है। नूर मोहम्मद ने लिखा:

‘है खट राग छत्तीस रागिनी। औ संग पुत्र पुत्रभामिनी।

षष्ठम् राग मलार कहावै। पुत्र भारजा कौन गनावै।’

यह स्पष्ट करता है कि कवियों ने रागों और रागिनियों को केवल संख्यात्मक या नाममात्र नहीं, बल्कि उनके संबंध, उत्पत्ति और संरचनात्मक विस्तार के संदर्भ में प्रस्तुत किया।

‘हंसजवाहिर’ में कासिमशाह ने राग—रागिनियों के ऋतुओं के अनुसार गायन का विवेचन किया। शरद ऋतु में भैरव राग और उसकी रागिनियाँ गाई जाती थीं। भैरव राग की सखियों के रूप में गुनगुन (गुनकरी), गजरी, रामकली, टोड़ी, देवगिरी और धनश्री का उल्लेख किया गया। हेमंत ऋतु में मालकोष राग के साथ सुबास, बिलावल, गौरी, सूही और ठौरी रागिनियों का गायन प्रचलित था। शिशिर के समय पंचम राग और उसकी रागिनियाँ गाई जाती थीं। बसंत ऋतु में श्रीराग के गायन का विधान था और उसकी रागिनियों के लिए देशकली, सारंग, प्रेमकली, गौरी आदि का उल्लेख किया गया। ग्रीष्म ऋतु में दीपक राग के साथ भिम्म बिलास (भीमपलासी), अहेर (अहीरी), कोधनी और मदन मोरिका आदि रागिनियों का उल्लेख मिलता है। पावस ऋतु में मेघमलार राग के साथ धनश्री, मधुमाद (मधुमाधवी) और कमोद रागिनियों का गायन किया जाता था।

आईन-ए-अकबरी में छः राग और उनकी रागिनियाँ :

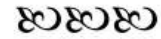
भारतीय संगीत की परंपरा में राग और रागिनियों का वर्गीकरण शास्त्रीय ग्रंथों और समकालीन कवियों दोनों में विस्तृत रूप से मिलता है। आईन-ए-अकबरी में छः प्रमुख राग और प्रत्येक राग की छः-छः रागिनियों का विवरण दिया गया है। फैज़ी ने इस विवरण को निम्नानुसार प्रस्तुत किया है। श्री राग में रागिनियाँ मालवी, त्रिवेनी, गौड़ी, केदारी, मधुमाधवी और बिहारी हैं। बसंत राग के अंतर्गत देशी, देवगिरी, बैराटी, टोड़ी, ललिता और हिंडोली रागिनियाँ सम्मिलित हैं। भैरव राग में मध्यमेदि, भैरवी, बंगाली, विराटका, सिंधवी और पुनर्जेय रागिनियाँ हैं। ध्यान देने योग्य है कि संस्कृत पाठ में ‘पुनर्जेय भैरवस्य वारागनाः’ लिखा है, जिसे फैज़ी ने भूलवश एक रागिनी मान लिया। पंचम राग में विभासा, भूपाली, कनारा, बर्धशिका, मालश्री और पदमंजरी रागिनियाँ गिनी गई हैं। मेघ राग के अंतर्गत मलार, सौराष्ट्री, असावर, कौशिकी, गंधारी और हरसिंगारी रागिनियाँ आती हैं। नटनारायण राग की रागिनियाँ कमोदी, कल्यान, अहीरी, शुद्धनट, सलक और नट हमीर हैं।

फैजी ने यह भी उल्लेख किया है कि कुछ विद्वान बसंत, पंचम और मेघ राग की जगह मालकोष, हिंडोल और दीपक राग को प्रधान मानते हैं और प्रत्येक राग के साथ पाँच-पाँच रागिनियों का उल्लेख करते हैं। इस प्रकार विभिन्न आचार्यों के मतों में राग और रागिनियों के नाम तथा संख्याओं में भिन्नता पाई जाती है।

यहां यह स्पष्ट होता है कि राग-रागिनियों के नामों और उनकी संख्या का भेद केवल शास्त्रीय मतों में ही नहीं, बल्कि हिन्दी सूफ़ी कवियों के प्रेमाख्यानों में भी दिखाई देता है। हिन्दी सूफ़ी प्रेमाख्यानों में राग और रागिनियों का वर्णन समसामयिक संगीत की शास्त्रीय मान्यताओं के अनुरूप है, लेकिन उनके नाम और विवरण मुद्रित संस्करणों में उपलब्ध पाठ के अनुसार ही प्रस्तुत किए गए हैं, क्योंकि सभी प्रेमाख्यान पूर्णतः शुद्ध और प्रामाणिक रूप में उपलब्ध नहीं हैं।

निष्कर्षतः भारतीय सूफ़ी परंपरा में संगीत का महत्वपूर्ण स्थान था, जिसमें राग, रागिनियाँ और समा (संगीत-भक्ति) का प्रयोग आध्यात्मिक और भावात्मक साधना के लिए होता था। मलिक मुहम्मद जायसी, नूर मोहम्मद, उसमान, कासिमशाह जैसे कवियों ने अपने काव्य में छः प्रमुख राग और छत्तीस रागिनियों का उल्लेख किया। उन्होंने रागों को स्वर, ग्राम, मूर्छना और रागिनियों के माध्यम से संगीत, प्रेम (इश्क) और आध्यात्मिक तन्मयता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया। कवियों ने रागों को ऋतु, भाव और गायक-वाद्य के अनुसार व्यवस्थित किया, जिससे संगीत और काव्य में गहनता और सौन्दर्य उत्पन्न हुआ।

आईन-ए-अकबरी में छः प्रमुख राग और प्रत्येक के छः रागिनियों का विवरण दिया गया है, जो समकालीन संगीत शास्त्र के अनुरूप है। हिन्दी सूफ़ी प्रेमाख्यानों में भी इसी प्रकार राग और रागिनियों का वर्णन मिलता है, हालांकि नामों और संख्या में थोड़ा भिन्नता है। कुल मिलाकर, सूफ़ी कवियों ने संगीत, राग और रागिनियों के माध्यम से इश्क, समा और आध्यात्मिक अनुभव को अपने काव्य में अभिव्यक्त किया।



संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय संगीत का इतिहास — राम अवतार वीर
यह पुस्तक भारतीय संगीत की उत्पत्ति, विकास, राग-रागिनी परंपरा और प्रमुख संगीतज्ञों का दस्तावेज है।
2. संगीतरत्नाकर — शारंगदेव
उत्तर एवं दक्षिण भारतीय संगीत का शास्त्रीय ग्रंथ, जिसमें राग, रस, ताल, स्वर, वादन, एवं नृत्य पर आधारित सामग्री है।
3. नाट्यशास्त्र — भरतमुनि
भारतीय कलाओं का प्राचीनतम ग्रंथ; इसमें संगीत, नृत्य, और सौंदर्य की शास्त्रीय व्याख्या है।
4. सूफ़ी कव्य संग्रह — आचार्य परशुराम चतुर्वेदी
हिन्दी सूफ़ी काव्य और उसमें समाहित संगीत के राग-रंग का सुसंगत संकलन।

5. *Role of Sufi Music in wvst Century Hindi CinemaÑ An Analytical Study*
हिंदी सिनेमा में सूफ़ी संगीत की भूमिका और उसके तत्वों का विश्लेषण।
 6. *Indian Classical Music & SufismÑ Growth & Influences — Swarsindhu Journal*
भारतीय शास्त्रीय संगीत पर सूफ़ीवाद का प्रभाव, राग और कविता की एकता, आध्यात्म का विवेचन।
 7. राग संगीत की उत्पत्ति एवं विकास — सार्वजनिक शोध ग्रंथ
राग, रागिनी, उनके वर्गीकरण, और संगीत की शास्त्रीय व काव्य परंपराओं का विस्तार।
 8. [PDF] संगीत का प्राचीन काल एवं उसके प्रमुख ग्रंथों में संगीत संबंधी विषयों की विवेचना सात स्वर, ग्राम, राग, रागिनी, नाद, गीत, वादन, नृत्य का स्रोत और शास्त्रीय आधार।
 9. अमीर खुसरो और भारतीय सूफ़ी संगीत
अमीर खुसरो की भूमिका सूफ़ी काव्य-रचना, मिश्रित रागों एवं संगीत कला के विस्तार में।
- अन्य उल्लेखनीय संदर्भ**
1. सूफ़ी संगीत का सांस्कृतिक वैश्वीकरण, समा और रक्स (नृत्य) संबंधी अध्याय।
 2. सूफ़ी संगीत एवं काव्य में आध्यात्मिकता, प्रेम, एवं राग-रंग के तत्व।
 3. मियाँ तानसेन, अकबर, राजदरबारी संगीत, हिन्दू-मुस्लिम संगीत का समावेशन आदि की ऐतिहासिक चर्चा।